जानुसंधि शूल में आहार प्रबंधन

आराधना*, डॉ0 भोलानाथ मौर्य**

सारांश-

सन्धिशूल या ऑस्टियोआर्थराइटिस गंभीर रोग के रूप में वर्तमान समय में अपनी जगह बना चुका है। विश्व भर में एक बड़ी जनसंख्या का हिस्सा संधिशूल या ऑस्टियोआर्थराइटिस खासकर जानु या घुटने का आर्थराइटिस लोगों को अपना शिकार बना रहा है। इस रोग में घुटने में सूजन, दर्द, लालिमा, चलते समय घुटने से आवाज आना, जोड़ो में जकड़न आदि समस्याऐं देखने में आती है। जानुसंधि शूल का कारण मोटापा, ज्यादा श्रम या अत्यधिक कम श्रम करना, बढ़ती आयु, गलत-आहार इत्यादि है। आयुर्वेदिक ग्रन्थों में संधिशूल रोग का कारण 'वायु' अर्थात् वात का कुपित होकर सन्धियों में एकत्रित हो जाना है। ऋतुओं के अनुसार वात का संचय ग्रीष्म में प्रकोप वर्षा में और शमन शरद ऋतु में होता है और इन सबो में जानुसंधि शूल रोग का गलत आहार सेवन है क्योंकि भोजन ही हमारे शरीर का सर्वोपरि साधन है जिसके द्वारा हम स्वस्थ या अस्वस्थ रहते हैं। आहार का सही चयन हमें सुखायु एवं हितायु की तरफ तथा गलत चयन दुःखायु एवं अहितायु की ओर अग्रसर करता है।

शब्द कुंजी- जानुसंधि, शूल, वात, ऑस्टियोआर्थराइटिस, आहार

परिचय- जानुसंधि शूल या घुटने का ऑस्टियोआर्थराइटिस के तेजी से बढ़ते भयावह रूप को हम विश्व स्वास्थय संगठन के द्वारा अनुमान लगा सकते हैं। W.H.O. के अनुसार 60 वर्ष से अधिक आयु के सभी व्यक्तियों में लगभग 10% से 15% लोगो में ऑस्टियोआर्थराइटिस है। महिलाओं में पुरूषों की तुलना में इसका प्रचलन अधिक है। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, 60 वर्ष से अधिक आयु के व्यस्क 2050 तक वैश्विक जनसंख्या का 20% से अधिक हो जायेंगे।[1]

डेटा ब्रिज मार्केट रिसर्च का विश्लेषण है कि घुटने के ऑस्टियोआर्थराइटिस बाजार का मूल्य 2021 में 5.9 बिलियन अमेरिकी डालर था और 2029 तक 12.02 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुंचने की उम्मीद है। इन सब से हम यह कल्पना कर सकते हैं कि आधुनिकता के दौर में हम हर चीज परफेक्ट चाहते हैं मगर स्वास्थय कहीं पीछे छूट जा रहा है। आहार-विहार की आदतें यदि हम सही और सुनियोजित कर लें तो यह समस्या आने से पहले ही काफी हद तक क्षीण हो जायेगी। आयुर्वेदिक ग्रन्थों में आहार-चिकित्सा को बहुत स्पष्ट ढ़ंग से वर्णित किया गया है। जिनके पालन से हम जानुसंधि शूल की समस्या से काफी हद तक निजात पा सकते है।

* पी0एच0डी0 शोध छात्रा (योग), संज्ञाहरण विभाग (चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) वाराणसी

** पर्यवेक्षक, सह पर्यवेक्षक, संज्ञाहरण विभाग (चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) वाराणसी

Emai l: arkhanaujiya1992@gmail.com

आयुर्वेद के अनुसार संधिशूल

आयुर्वेद ग्रन्थों में संधिशूल को संधिगत वात, वात व्याधि, सन्धिगत अनिल एवं अस्थिमज्जागत वातव्याधि, संधिविश्लेष या संधिच्यूति आदि के रूप में वर्णित किया गया है।[2]

सन्धिगत कुपित वा सन्धिनाश, सन्धियों में शूल और शोथ पैदा करती है, अस्थिगत कुपित वात अस्थिशोष, अस्थिभेद तथा अस्थिशूल पैदा करती है।[2]

आयुर्वेद के अनुसार संधिशूल

आयुर्वेदिक ग्रन्थों में जानुसंधिशूल को अनेक नामों से जाना जाता है। आचार्य भेल ने इसे अस्थि-मज्जागत वातव्याधि, संधि विच्युति कि रूप में वर्णित किया है।[3]

वातपूर्णदृतिस्पर्शः शोफं सन्धिगतोऽनिल।

प्रसारणाकुच्चनयोः प्रवृत्ति च सवेदनाम्।। च .चि.स.28/37

जब प्रकुपित वायु संधियों में आश्रित हो जाता है तब संधियों को छूने से 'वातपूर्णदृति' (वायु से भरे मशक) के समान स्पर्श का अनुभव होता है तथा संधियों में शोथ (सूजन) हो जाती है। शरीरिक अंगो को फैलाने तथा सिकोड़ने में पीड़ा होती हैं।[4]

आचार्य चरक ने वातव्याधि चिकित्सा अध्याय में संधिगतवात रोग का वर्णन किया है। उन्होने इसका उल्लेख ''संधिगत अनिलः'' के रूप में किया है।[5]

आचार्य सुश्रुत ने वातव्याधि अध्याय में इसे संधिशूल को संधिगतवात के रूप में वर्णित किया है।[6]

''अस्थिस्थाः साक्थिसन्ध्यास्थिशूलं तीव्रं बलक्षयम'' 15/14

अर्थात् कुपित वायु पैरो में, सन्धि और अस्थि में तीव्र शूल और बल का ह्रास करता है।[7]

यह रोग मुख्यतः वृद्ध अवस्था में उत्पन्न होता है, क्योंकि इस अवस्था में स्वाभाविक रूप से ही मनुष्य में वात दोष की वृद्धि होती है। विकृत वात दोष द्वारा सन्धियों को आक्रान्त करने से सन्धिवात नामक रोग उत्पन्न होता है।[8] सन्धिगत वात में बड़ी सन्धियां विशेषतः ज्यादा प्रभावित होती है।

उदाहरणार्थ- जानु सन्धि (knee joint), गुल्फ सन्धि (Ankle joint)।

संन्धिशूल के लक्षण

हन्ति सन्धिगतः सन्धीञ् शूलाटोपौ करोति च ।।मा.नि. 25/21

सन्धि में स्थित विकृति वायु सन्धियों को नष्ट कर देता है तथा उनमें शूल और सूजन को उत्पन्न करता है।[8] सन्धि कुपित वायु सन्धियों को नष्ट कर देता है।[9]

अतः सन्धियों में वात का प्रकोप होने से सन्धिशूल उत्पन्न होता है।

सन्धिशूल का कारण -

रूक्षशीताल्पलध्वन्न व्यवायातिप्रजागरैः।

विषमादु पचाराच्य दोषासृक्स्त्रवणादपि।।च.चि.रू. 28/15

रूक्ष, शीतल, अल्प तथा लघु भोजन के निरन्तर सेवन से, अत्यधिक मैगुन व रात्रि जागरण से, असमय में पंचकर्म या देश और काल के विरूद्ध असात्म्य आहार-विहार का सेवन करने से, अधिक उछलने-कूदने, तैरने, पैदल चलने व अधिक व्यायाम आदि से, धातुओं के क्षय, चिंता, शौक, रोगजनित दुर्बलता तथा आधारणीय वेगों के धारण से, चोट, उपवास, मर्मस्थानों की बाधा इत्यादि से शरीर में कुपित वायु रिक्त (स्नेह, मृदुता, पिच्छिलता आदि गुणों से शून्य) स्त्रोतों को परिपूर्ण करके विविध प्रकार की एकोंगिक व सर्वांगिक व्याधियों को उत्पन्न करता है।[10]

विकृत वायु से उत्पन्न असाधारण व्याधि ही वातव्याधि है।[11]

वातशूल

शूल का अर्थ है, सूई या सूआ चूभने के समान वेदना का अनुभव शूल में वात का विशेष प्रकोप होने के कारण इसे वातजशूल कहते है।[10]

वातशूल की उत्पत्ति- विस्टम्भी, अन्नाहार, रूक्ष (विहार-आहार), यव, माष कलाय (उड़द), मूँग, निस्पाव (सेम), कोदो, मसूर, गेहूँ, अन्न कफ कारक एवं रूक्ष भोजन से वेग रोकने से वात अधो गत मार्ग को अवरूद्ध कर शूल उत्पन्न करता है। यह वातज शूल है।

चरक संहिता एवं सुश्रुत संहिता में कहा गया है कि सभी दोषों का मूल 'वायु' है।[11]

आयुर्वेद जीवन में पोषण एक केन्द्रिय भूमिका निभाता है। आयुर्वेद ''आहार'' को ''अन्न'' पर अच्छे जीवन, स्वास्थय और मानव कल्याण के साधन के रूप में विशेष जोर देता है। स्वस्थय और पौष्टिक भोजन मन, शरीर और आत्मा का पोषण करता है।

जानुसंधि शूल में आहारवनसे-

संधिशूल का रोग आयुर्वेद के अनुसार बात के कुपित होने का परिणाम है अतः हम यदि वात को कम करने वाले आहार को सेवन करें तो जानुसंधि शूल में निश्चय ही लाभ होगा। आयुर्वेदिक ग्रन्थों में जैसे- चरक संहिता, सुश्रुत संहित, अष्टांगसंग्रह, आयुर्वेदीय विकृति-विज्ञान, आयुर्वेदीय क्रिया शरी इत्यादि ग्रन्थों में आहार-चिकित्सा को विस्तृत व्याख्या की गई है जो शमन चिकित्सा के अन्तगर्त आते हैं।

चरक संहिता के अनुसार आहार -

स्निग्धाम्ललवणोष्णाद्यैराहारैर्हि मलश्रिचतः

स्त्रोतो बध्द्वाडनिलं रून्ध्यात्तस्मात्त मनुलोमयेत्।। च.चि. 28/85।।

अर्थात् स्निग्ध, अम्ल, लवण एवं उष्ण आदि आहार द्रव्यों के सेवन से संचित हुआ मल (दोष) स्त्रोतों को बांध कर वायु को अवरूद्ध कर देता है। अतः अवरूद्ध वायु का अनुलोमन करना चाहिए।[12]

चरक संहिता मात्राशितीयाध्यायः में आहार की निश्चयात्मक विधि का वर्णन करते हुए कहा गया है कि ''आहार की जो मात्रा भोजन करने वाले की प्रकृति अर्थात् वात, पित्त एवं कफ में बाधा न पहुँचाते हुए यथा

समय पच जाय बही उस व्यक्ति के लिए प्रमाणित आहार है।[13]

सुश्रुत संहिता के अनुसार- जो औषध या आहार-विहार वायु प्रकृति के लिए पथ्यकारी है वह पित्त प्रकृति के लिए अपथ्यकारी है। इस विचार को दृष्टि से कोई भी द्रव्य हर समय पूर्णरूपेण हितकर या अहितकर नहीं हो सकता। ऐसा कुछ आचार्य कहते हैं ''परन्तु धनवन्तरि के मतानुसार सुश्रुततन्त्र में सम्पूर्ण द्रव्य अपनी प्रकृति से किंवा अपने संयोग से निरन्तर हितकर या अहितकर और अवस्थानुसार हित और अहित उभयाथिकारी होते हैं।[14] सु.सं.सू. 20/3

रोगं सात्म्यं च देशं च कालं देह च बुद्धिमान्।

अवेक्ष्याग्र्यादिकान् भावान् रोगवृतैः प्रयोजयेत्।। सु .सू.सं.20/9।।

रोगवृति अर्थात् रोगी समूह या रोगी के उदरादिक रोग, अस्टविध सात्म्य, आनूपदिक देश, शीतोस्णवर्षरूपी काल, स्थूल-कृश-मध्य देह, अग्नि, प्रकृति, वय, बल, सत्व आदि भावों को देखकर बुद्धिमान वैद्य विचार करके हित व अहित द्रव्य का प्रयोग करें।[14]

अष्टांगसंग्रह में कहा गया है कि- वायु की चिकित्सा स्नेहन और स्वेदन है, यदि वायु का संशोधन करना हो तो मृदु-स्निग्ध-उष्ण-मधुर-अम्ल और लवण रस वाले खानपान देने चाहिए।[15]

आयुर्वेदीय क्रिया शरीर के अनुसार आहार- समरस आहार ही हिताहार है। शरीर पञ्चभौतिक होने से इसमें पाँचों महाभूतों का जो तारतम्य है, उसी तारतम्य के अनुसार लिया गया आहार हिताहार, सभाहार किंवा युक्ताहार कहलाता है।[16]

निष्कर्ष- आज का मानव प्राकृतिक आहार चर्चा से दूर होता जा रहा है जिसकी जगह जंक फूड इत्यादि ने ले ली है तथा विरूद्ध आहार सेवन आजकल शौक सा बन गया है। इस कारण हमें आज संधिशूल (जानु) या ऑस्टियोआर्थराइटिस जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। यदि हम अपने आहार को प्रबन्धित एवं संतुलित कर लें तो शायद इस जानुसंधि शूल की समस्या को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. https://www.databridgemarketresearch.com/reports/global-knee-osteoarthritis-market
2. शास्त्री, कविराज डॉ. अम्बिकादत्त, वि.स. 2076, सुश्रुत संहिता आयुर्वेदतत्तवसन्दीपिका' हिन्दी व्याख्या वैज्ञानिक विमर्शोपेता, चैखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी भारत। निदानस्थान पृष्ठ सं0 377, 298
3. द्विवेदी, डॉ0 लक्ष्मीधर, 2016, महर्षि, अग्निवेशप्रणीत चरक संहिता, तृतीय भाग (चिकित्सास्थान) चैखम्भा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी। ISBN: 978.81.218.0347.2 पृष्ठ सं0- 916, 917
4. वही चरक संहिता चिकित्सास्थान। पृष्ठ सं- 917
5. सुश्रुत संहिता निदानस्थान (पृष्ठ सं- 298)
6. गुप्त, कविराज अत्रिदेव, 2005, श्रीमद्वाग्भट्टाचार्य अष्टांगसंग्रहः हिन्दी व्याख्या संहितः (सूत्र- शरीर- निदानस्थानात्मकः प्रथमों भागः) चैखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी। पृष्ठ सं- 400
7. पाण्डेय श्रीकान्त, 2010, आयुर्वेदीय रोग एवं विकृति विज्ञान, चैखम्बा सुभारती प्रकाशन, वाराणसी। पृष्ठ सं- 345-346
8. उपाध्याय आयुर्वेदाचार्य श्रीयदुनन्दन, वि. सं 2077, महामतिश्रीमाधवकरविचितं माधवनिदानम् 'मधुकोश' व्याख्या विभूषितम्,

चैखम्भा प्रकाशन, वाराणसी। ISBN: 978.93.867358.09.6 पृष्ठ सं0- 463, 448, 449, 450

9. चरक संहिता, चिकित्सा स्थान पृष्ठ सं- 913
10. शर्मा, आचार्य ब्रह्मदत्त, 1988, आत्यायिक व्यधि-निदान चिकित्सा, प्रथम संस्करण, चैखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान-षष्ठम् अध्याय
11. पण्डेय वैद्य जयमीनि, 2010, हरित संहिता संस्कृत मूल व 'निर्मला' हिन्दी टीका प्रथम संस्करण, चैखम्भा विश्वभारती, वाराणसी। पृष्ठ सं- 261
12. द्विवेदी डॉ0 लक्ष्मीधर, 2016, महर्षि अग्निवेशप्रणीत चरक संहिता, तृतीय भाग (चिकित्सास्थान) चैखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी। ISBN: 978.81.218.0347.2 पृष्ठ सं0- 928
13. पाण्डेय शास्त्री पं. काशीनाथ, चतुर्वेदी डॉ0 गोरखनाथ, 2019, चरकसंहिता सविमर्श 'विद्योतिनी' हिन्दी व्याख्योपेता प्रथम भाग चैखम्भा भारती अकादमी वाराणसी ISBN: 978.93.84541.259.5 पृष्ठ सं0- 90
14. शास्त्री कविराज डॉ0. अम्बिकादत्त, वि.सं. 2076, सुश्रुत संहिता 'आयुर्वेदतत्तवसन्दीपिका' हिन्दी व्याख्या वैज्ञानिक विमर्शोपिता, चैखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी। पृष्ठ सं- 107, 108
15. गुप्त कविराज अत्रिदेव, सन् 2005, श्रीमदद्वाग्भटविरचितः अष्टांगसंग्रहः हिन्दी व्याख्या सहितः (सूत्र-शरीर-निदानस्थानात्मकः प्रथमो भागाः) चैखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी। पृष्ठ सं- 166 16. देसाई वैद्य रणजितराय, 2013, आयुर्वेदीय क्रियाशरीर श्री वैद्यनाथ, आयुर्वेद भवन लिमिटेड, नैनी इलाहाबाद। पृष्ठ सं- 117

❐